"संगीत के माध्यम से मूल्य शिक्षा"

डॉ0 रश्मि गुप्ता
संगीत विभागाध्यक्षा,
सी0एम0पी0 डिग्री कालेज, प्रयागराज
E-mail : drsurendraa@gmail.com

Reference to this paper should be made as follows:

डॉ0 रश्मि गुप्ता,

"संगीत के माध्यम से मूल्य शिक्षा",

Artistic Narration 2019, Vol. X, pp.44-49

http:// artistic.anubooks.com/

सारांश

मूल्य परक शिक्षा क्या है? इसे स्पष्ट करने के पूर्व यह जानना आवश्यक है कि मूल्य क्या है? मूल्य (टंसनम) शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के वेलियर शब्द से मानी जाती है, जिसका अर्थ है– योग्यता, गुण या महत्व। इस दृष्टिकोण से– मूल्य शब्द का अभिप्राय वस्तु या क्रिया के उस गुण से होता है, जिससे आनन्द की आशा होती है। मूल्य का अर्थ निष्चात्मक होता है, मूल्य व्यक्ति की रूचियों पर केन्द्रित होता है। वास्तव में मूल्य मनुष्य के चिन्ता व्यवहार तथा आदर्शों का निर्धारण करते हैं, मूल्य मानव का एक आन्तरिक गुण है। डॉ0 राधा कुमुद मुखर्जी ने मूल्य शब्द के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा भी है– "मूल्य एक जटिल सम्पूर्णता है यह चेतन, प्राणी शास्त्रीय तथा सामाजिक आदर्श क्या है?

प्रस्तावना

मूल्य परक शिक्षा क्या है? इसे स्पष्ट करने के पूर्व यह जानना आवश्यक है कि मूल्य क्या है? मूल्य (टंसनम) शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के वेलियर शब्द से मानी जाती है, जिसका अर्थ है– योग्यता, गुण या महत्व।[1] इस दृष्टिकोण से– मूल्य शब्द का अभिप्राय वस्तु या क्रिया के उस गुण से होता है, जिससे आनन्द की आशा होती है।[2] मूल्य का अर्थ निष्चात्मक होता है, मूल्य व्यक्ति की रूचियों पर केन्द्रित होता है। वास्तव में मूल्य मनुष्य के चिन्ता व्यवहार तथा आदर्शों का निर्धारण करते हैं, मूल्य मानव का एक आन्तरिक गुण है। डॉ0 राधा कुमुद मुखर्जी ने मूल्य शब्द के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा भी है– "मूल्य एक जटिल सम्पूर्णता है यह चेतन, प्राणी शास्त्रीय तथा सामाजिक आदर्श क्या है?"[3]

जे0आर0 फ्रैंचल के अनुसार– "मूल्य आचार, सौन्दर्य, कुशलता या महत्व के वे मानदण्ड है जिनके साथ वे होते हैं तथा जिन्हें वे कायम रखते हैं।"[4]

वस्तुतः मूल्य व्यक्ति के क्रियाकलाप, व्यवहार आदि में निहित गुण है जिनके द्वारा समस्त सामाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियाँ संचालित होती हैं।

मूल्यों का वर्गीकरण अनेक वर्गों में किया गया है जैसे– (1) सामाजिक मूल्य, (2) आर्थिक मूल्य, (3) राजनैतिक मूल्य, (4) नैतिक मूल्य, (5) सांस्कृतिक मूल्य, (6) शैक्षिक मूल्य इत्यादि।

शैक्षिक मूल्य– ब्रवेकर ने शैक्षिक मूल्य को परिभाषित करते हुए कहा है कि–"मूल्य व्यक्ति की शैक्षिक एवं बौद्धिक रूचियों से सम्बन्धित होते हैं।" अर्थात् शैक्षिक मूल्यों का सम्बन्ध बौद्धिक विकास सम्बन्धी मूल्यों से है।[5] इसमें अनेक प्रकार के मूल्य सम्मिलित होते हैं– 1. बौद्धिक मूल्य, 2. स्वास्थ्य से सम्बन्धित मूल्य, 3. भावात्मक मूल्य, 4. व्यावसायिक मूल्य, 5. राजनैतिक विकास से सम्बन्धी मूल्य, 6. धार्मिक एवं नैतिक मूल्य इत्यादि। उन मूल्यों के आधार पर ही मूल्यपरक शिक्षा की अवधारणा प्रस्तुत की गयी है।

मूल्यपरक शिक्षा– वर्तमान युग में वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास शिक्षा प्रणाली की संरचना औद्योगिक सभ्यता के उदय एवं उपभोक्तावादी संस्कषति के विकास से मानव के जीवन दर्शन, जीवन शैली तथा दृष्टिकोणों में तीव्र गति से परिवर्तन हुये हैं। इन परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप व्यक्तियों में संकीर्णता स्वास्थ्यपरता, संवेदनहीनता एवं विलासिता में भी वृद्धि हुयी है। समाज के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं नैतिक मूल्यों में भी ह्रास हुआ है।

शिक्षा समाज का एक अंश है अतः शैक्षिक मूल्यों पर भी इसका प्रभाव स्पष्ट रूप से परिपालित होता है। मूल्यों के विकास में शिक्षा सकारात्मक भूमिका का निर्वाह करती है। वर्तमान समय में शिक्षा में अनुशासनहीनता, कर्त्तव्यविमुखता, अनुत्तरदायित्व, श्रम की विमुखता आदि विकृतियों ने अपना

स्थान बना लिया है। इसलिये भारत ही नहीं बल्कि विश्व के अन्य राष्ट्रों में भी शिक्षा को मूल्यपरक बनाने का निरन्तर प्रयास किया जा रहा है।[6]

शिक्षा जगत में गठित सभी आयोगों ने मूल्य शिक्षा की आवश्यकता को स्वीकार कर लिया है। विश्व में सर्वत्र मूल्यों के निरन्तर ह्रास से चिन्तित शिक्षाशास्त्रियों ने मूल्यों को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिये संगीत शिक्षा का सर्वाधिक उपयुक्त माध्यम माना है। मूल्य शिक्षा का अभिप्राय ऐसी शिक्षा में से है जिसमें मूल्यों पर बल दिया जाता है। इसके अन्तर्गत षिक्षा प्रणाली का संगठन इस प्रकार किया जाता है कि शिक्षा के सभी अंग जैसे– शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षण विधियाँ, शिक्षक आदि मूल्यों के संवर्द्धन में योगदान कर सकें।[7]

मूल्यशिक्षा एक नवीन तथा व्यापक संप्रत्यय है। इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि परम्परागत अवधारण धार्मिक शिक्षा से सम्बद्ध है। समाज प्रत्येक वर्ग के लोगों का मिला जुला सम है, मानव युग सृष्टा है, तथा अपनी भावनाओं को पहचानता हुआ जिस ओर चाहता है, उस दिशा में मोड़ लेता है जो विचार आज प्रमुख प्रतीत होता है वही कल महत्वहीन हो जाता है, प्रत्येक मानव हृदय में कला के प्रति एक प्रेम व आनन्दानुभूति की भावना विद्यमान रहती है, दैनिक जीवन की परिस्थितियों के वशीभूत होकर वह कला को किस सीमा तक परख पाता है अथवा प्रयोग में ला सकता है, यह सामाजिक व्यवस्था पर निर्भर करता है। भारतीय संगीत अन्य कलाओं के समान ही बौद्धिक व्यवसाय के रूप में समय व परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित व विकसित होती रही है।

वैदिक काल में संगीत का रूप 'सामगान' के रूप में प्रस्फुटिक हुआ। सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत धार्मिक चर्चाओं के साथ ही इसका विकास हुआ। कालान्तर में भक्ति भावना का रूप क्रमशः क्षीण होने लगा, अतः वैदिक संगीत का स्वरूप एक कला के रूप में विकसित होने लगा जो संगीत देव कृत था, वह मानव कृत हो गया। जो भगवत् उपासना था, वह आनन्द का साधन हो गया। यही संगीत मध्यकाल में 'दरबारी संगीत कहलाया। सच तो यह है कि संगीत अलौकिक धरातल से लौकिकता की भूमि पर आ गया। संगीत का समाज से घनिष्ट व अटूट सम्बन्ध है व्यक्ति समाज की एक इकाई है, संगीत व समाज में अनन्याश्रय सम्बन्ध है समाज से अलग कला का कोई अस्तित्व नहीं होता, किसी भी जन समाज की कला उनकी मानसिकता से निर्धारित होती है और समाज की मानसिकता उसकी भौतिक स्थिति से तय होती है।

आज समाज दो तरह की सामाजिक व्यवस्थाओं में विभाजित है। प्रथम–पूँजीवादी व्यवस्था तथा द्वितीय समाजवादी व्यवस्था।[8] इन दोनों व्यवस्थाओं में संगीत दो रूप से मिलता है। पूँजीवादी व्यवस्था संगीत में जिन भावनाओं की अधिकता है वे नकारात्मक अधिक है, जिसमें व्याकुलता भरी उत्तेजना, अकेलापन तथा कामुकता भरे उच्छुखंल नशीले संगीत का बोलबाला है। यह समाज की

अधिक असमानताओं से उत्पन्न निराश एवं शोषण की कलात्मक परिणीत है। डिस्को संगीत, पॉप संगीत इत्यादि इसके भिन्न–भिन्न रूप से है आज समाज में इसी संगीत की प्राथमिकता है। जो क्षणिक आनन्द देती है, दूसरी व्यवस्था के अन्तर्गत प्रेम, भक्ति व उपासना इत्यादि उदात्त भावों की अभिव्यक्त करता है, इसके अन्तर्गत सामाजिक प्राणी अपने मनोभावों को संगीत द्वारा निश्छल भाव से अभिव्यक्त करता है।

समाज के कल्याण हेतु संगीत का योगदान सर्वोपरि है समाज कल्याण से तात्पर्य सामाजिक जीवन के सर्वांगीण कल्याण से है, संगीत का उद्देष्य मानव जाति के सामाजिक जीवन को सुन्दर, उत्कृष्ट, महत्वपूर्ण बनाना है। किसी भी कला के क्षेत्र में व्यक्ति अपने सीमित व्यक्तित्व से ऊपर उठकर सामूहिक–व्यक्तित्व में समरस हो जाता है ऐसे हृदय संवाद के लिए संगीत से बढ़कर और कोई साधन नहीं हो सकता। सामाजिक जीवन में मनोरंजन के साथ–साथ एक अन्य कार्य भी संगीत के द्वारा सम्भव है, वह है प्रचार का। एक गीत द्वारा जो कार्य हो सकता है वह सैकड़ों व्याख्यानों द्वारा भी सम्भव नहीं है, संगीत द्वारा ग्रहण करने की शक्ति का विकास होता है।

किसी भी देश की संस्कृति वहाँ की कला से मुखरित होता है। प्रत्येक राष्ट्र का संगीत उसके सांस्कृतिक उत्थान–पतन का द्योतक है, साम्प्रदायिक एकता संगीत में पूर्णरूपेण दृष्टिगोचर होती है संगीत सम्मेलनों में प्रायः यह देखने में आता है कि कला मंच पर हिन्दू गायक, मुसलमान सारंगी वादक तथा बंगाली या पंजाबी तबला–वादक आदि विभिन्न धर्म के संगीतज्ञ स्वर और लय का एक साथ रसास्वादन करते हैं उनके सामने बैठे सभी वर्गों के श्रोता मन्त्रमुग्ध होकर एकता को सूत्र में निबद्ध हो जाता है।

मनुष्य के दैनिक सामाजिक जीवन के नित्य क्रिया–कलापों के अतिरिक्त संगीत का चिकित्सा के क्षेत्र में सम्बन्ध परिलक्षित हो रहा है। इंग्लैण्ड के चिकित्सक डॉ0 एडवीना मीड तथा कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के शरीर शास्त्री डॉ0 एडवर्ग पोडीलास्की ने शरीर व मन पर संगीत के प्रभावों एवं सम्बन्धों का विस्तृत अध्ययन कर शोध निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए कहा है कि संगीत की शक्ति से स्नायु संस्थान में एक विशेष प्रकार की हलचलें उत्पन्न होती है। मानसिक असन्तुलन, क्रोध, आवेग जैसे मनोरोगों का शमन संगीत की मधुर स्वर लहरियों के द्वारा तो होता ही है, साथ ही माइग्रेन, उच्च रक्तचाप, अनिद्रा आदि रोगों में भी संगीत चिकित्सा द्वारा सहज ही छुटकारा पाया जा सकता है।

मूल्यपरक शिक्षा में विद्यालय तथा शिक्षक की भूमिका–

विद्यालय शिक्षा का सर्वाधिक प्रभावशाली तथा सशक्त साधन है अतः मूल्यों के विकास में विद्यालय की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मूल्य शिक्षा के विकास में विद्यालय की सकारात्मक भूमिका होती है। कोठारी कमीशन में इस तथ्य से स्पष्ट करते हुए कहा गया है– "विद्यालयों की प्रातःकालीन सभायें, पाठ्यक्रम, धार्मिक उत्सवों का आयोजन, कार्यानुभव, खेलकूद, विषय क्लब, समाजसेवा आदि

छात्रों में सहयोग, पारस्परिक सद्भाव, निष्ठा, ईमानदारी, अनुषासन, सामाजिक दायित्व आदि जीवन मूल्यों के विकास में सहायक होते हैं।"

अतः इन क्रियाओं के आयोजन द्वारा विद्यालय में बालकों के स्वस्थ जीवन मूल्यों का विकास कराया जा सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि विद्यालय का वातावरण स्वस्थ तथा सौहार्द्रपूर्ण होना चाहिए। इस सम्बन्ध में शिक्षक सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं–मूल्यों के विकास तथा इन्हें पुर्नप्रतिष्ठित करने के दृष्टिकोण से एक शिक्षक के कुछ दायित्व इस प्रकार होने चाहिए–[10]

(1) शिक्षक जो भी विषय पढ़ाता है इसी के साथ वह विषय से सम्बन्धित आदर्शों का सृजन करें, क्योंकि प्रत्येक विषय के कुछ मूल्य होते हैं विषय शिक्षण के साथ शिक्षक छात्र में कल्पना, प्रत्यक्षीकरण, निश्चयीकरण, वसुपरक मूल्याँकन, सहजशीलता, एकता आदि जीवन मूल्यों का विकास किया जा सकता है।

(2) शिक्षक को स्वयं अपना आचरण व्यवस्थित करना होगा, क्योंकि शिक्षक के आचरण एवं व्यवहार का छात्रों पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। गाँधी जी ने इस बात पर विशेष ध्यान केन्द्रित करते हुए कहा था– "मूल्यों के सृजन हेतु सर्वप्रथम शिक्षकों को इन सत्यों को अपने जीवन में उतारना होगा। ये जीवन मूल्य शब्दों या पुस्तकों के माध्यम से नहीं सिखाये जा सकते।"

(3) सामान्यतया खेल बालक को स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है इन खेलों के माध्यम से बालकों में स्वस्थ जीवन मूल्यों का विकास कराया जा सकता है। खेलों के माध्यम से बालकों में सहयोग, सहिष्णुता, प्रतिस्पर्धा, निर्णय क्षमता, नेतृत्व के गुण, स्वास्थ्य की उत्तम आदतों का विकास जैसे मूल्यों को विकसित किया जा सकता है। एक शिक्षक खेलकूदों का आयोजन करके बालकों में इन जीवन मूल्यों का विकास कर सकता है।

(4) शिक्षक द्वारा समय–समय पर पाठ्यसहगामी क्रियाओं का आयोजन करना चाहिए। ये मूल्यों के विकास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है कोठारी कमीशन में इस सम्बन्ध में कहा भी गया है– "पाठ्यसहगामी गतिविधियाँ या क्रियायें– धार्मिक उत्सवों का आयोजन, कार्यानुभव, खेलकूद, समाज सेवा ये क्षेत्रों में कर्तव्यनिष्ठा, ईमानदारी, अनुशासन, सामाजिकता आदि जीवन मूल्यों के विकास में सहायक होती है।" अतः विद्यालय में शिक्षकों द्वारा एन0सी0सी0 स्काउटिंग, प्रौढ़ शिक्षा आदि कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिये।[11]

(5) इस प्रकार हम देखते हैं कि संगीत सामाजिक जीवन में मनोरंजन मात्र ही नहीं है, वरन् उसमें प्रभावशाली ताकत भी है। अतः मैं विषय को और अधिक लम्बा न करते हुए अन्त में इतना

ही कहना चाहती हूँ कि प्राचीन काल से आज तक संगीत के माध्यम से हमारे मूल्यों की रक्षा हुई है, किसी भी कला को पल्लवित एवं पुष्पित करने के लिए सामाजिक सुव्यवस्था अपेक्षित है, मानव समाज के उत्थान के लिए तथा विकास के लिए संगीतिक मूल्यपरक शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. *उत्तर भारतीय संगीत का इतिहास,* पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे, संगीत कार्यालय, हाथरस
2. *नाद विनोद,* पन्ना लाल गोस्वामी, नारायण दास जंगलीमल, दिल्ली
3. *परम्परागत हिन्दुस्तानी सैद्धान्तिक संगीत,* डॉ0 भगवन्त कौर, कनिश्का पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली
4. *भारतीय संगीत में वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग,* अनीता गौतम, कनिष्का पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली
5. *मआदनुल मौरमूसीकी,* मु0 करम इमाम खाँ, हिन्दुस्तानी प्रेस, लखनऊ
6. *ठुमरी एवं महिला कलाकार,* डॉ0 पूर्णिमा द्विवेदी, अनुभव पब्लिषिंग हाउस, इलाहाबाद
7. *Archaeology of Indian Musical Instrument*, Krishnamorthy
8. *Classical Musical Instrument,* Suneera Kashival
9. *Musical Instrument of India*, B.C. Deva
10. *"संगीत"* मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस
11. *"संगीत का विहार",* अखिल भारतीय गान्धर्व मण्डल, मिरज द्वारा प्रकाषिक मासिक पत्रिकाएँ।